WITWAVES
JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
Vol-2 Issue-1
(International Peer-Reviewed E-Journal)
(January 2025)

हिन्दी व्यंग्य साहित्य और श्रीलाल शुक्ल

नीरज कुमार द्विवेदी
सहा.प्राध्यापक - हिंदी विभाग
दयानन्द वैदिक कॉलेज, उरई (उ.प्र.)

शोध सार

श्रीलाल शुक्ल के व्यंग्य और समाज की अपने परिवेश और समाज से परिचित थे।और अपनी पैनी दृष्टि से उसको देखते थे। हर युग में लिखा गया साहित्य तत्कालीन सामाजिक परिवेश की भूमिका पर रचा जाता है। उसमें अपने समय-समाज का दर्पण स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। एक जागरुक साहित्यकार अपने समाज में व्याप्त विसंगतियों, विडम्बनाओं, परम्पराओं, संस्कृति आदि का साक्षी होता है और उन्हीं में से अपने रचनाकर्म के लिए कथ्य चुनता है। श्रीलाल शुक्ल जी अपने परिवेश और समाज से रु-ब-रु थे और अपनी पैनी दृष्टि से उसको देखते थे। बेहद सरल और बेहद गूढ दोनों ही तरह के विषयों को उन्होंने अपनी रचनाओं में उठाया है। उन्हें ज़िन्दगी में गहरा विश्वास है और वे जीवन रस की अंतिम बूँद तक का अनुभव करना चाहते हैं। वहीं उनके व्यंग्य की धार इतनी तेज है कि वह पाठक के मन पर गहरी चोट कर जाती है। उनकी लेखन प्रक्रिया अन्य लेखकों से कुछ अलग है। इस शोधपत्र में शुक्ल जी की व्यंग्यपरक रचनाओं के विविध आयामों का अध्ययन प्रस्तुत किया जा रहा है। शुक्ल जी ने 'राग दरबारी', 'मकान', सूनी घाटी का सूरज','पहला पड़ाव' और 'अज्ञातवास' जैसे उपन्यासों सहित 'एक नया हितोपदेश', 'स्वामी से भी ज्यादा स्वामिभक्त', 'निर्धन पड़ोसी की कथा', 'गिरफ़्तारी' आदि कहानियों में लोगों के आर्थिक शोषण का व्यंग्यात्मक चित्रण किया है।

बीज शब्द

व्यंग्य, स्वामिभक्त, व्यवस्था, सामाजिक, कटु, चित्रण, दृष्टिकोण।

शोध विस्तार

शुक्ल जी के सम्पूर्ण साहित्य विधा में सामाजिक स्थितियों पर हुए व्यंग्य को केन्द्र में रखा गया है। इसके अन्तर्गत वर्ग एवं वर्ण व्यवस्था, बदलते सामाजिक-पारिवारिक सम्बन्ध, दिशाहीन युवावर्ग, विवाह सम्बन्धी सामाजिक दृष्टिकोण, मूल्यों का विघटन, नारी जीवन की विसंगतियाँ, बुद्धिजीवी पूंजीपति समाजसेवक, अपराधी वर्ग आदि सन्दर्भों की चर्चा की गयी है।

श्रीलाल शुक्ल के साहित्य में आर्थिक विसंगतियों को केन्द्र में रखा गया है। प्रशासनिक भ्रष्टाचार एवं निष्क्रियता अफ़सरशाही, पुलिस तन्त्र, भ्रष्ट एवं स्वार्थलोलुप नेतृत्व, वोट की राजनीति एवं चुनाव, प्रजातन्त्र की विसंगतियाँ, दल बदल, कुर्सी की लालसा, राजनीति और अपराध, सरकारी नीतियों सम्बन्धी विसंगतियों के बारे में शुक्ल जी की व्यंग्य रचनाओं का मूल्यांकन करने का प्रयास किया गया है। श्रीलाल शुक्ल जी के साहित्य में धर्म एवं संस्कृति के विविध पहलुओं पर भी व्यंग्य किया गया है। व्यंग्य हमारे यथार्थ की ऐसी अभिव्यक्ति है जिसमें व्यक्ति एवं समाज की कमजोरियों, दुर्बलताओं,कथनी और करनी के बीच के अन्तर को व्यंग्य एक सही दिशा में हमारे सामने लाता है। यह बात सही है कि वह कभी कभी आक्रामक भी होता है,लेकिन इसमें भी नैतिक और सामाजिक हितों का उद्देश्य शामिल होता है। इस संदर्भ में प्रोफेसर कांतिकुमार जैन का कथन है--"व्यंग्य की सबसे बड़ी विशेषता है उसकी तात्कालिकता और संदर्भ से उसका लगाव है, जो आलोचक शाश्वत साहित्य की बात करते है, उनकी दृष्टि से व्यंग्य पत्रकारिता के दर्जे की वस्तु मान लिया गया है।उन्हें लगता है कि साहित्यकार व्यंग्य का उपयोग चटखारेबाजी के लिए भले ही कर ले, कभी गम्भीर लक्ष्य के लिए उसका उपयोग नहीं किया जा सकता।"[1]

श्रीलाल शुक्ल अपनी विशिष्ट शैली में व्यंग्य-विधा को प्रस्तुत करने के लिए चर्चित हैं। उनके पास चोट करने वाली सक्षम भाषा और आर-पार देख सकने वाली तेज दृष्टि है। उनके बारे में रघुवीर सहाय ने कहा है, "श्रीलाल को अगर हिन्दी के पानी-पाड़ों ने श्रेष्ठ साहित्य के चौके में नहीं बैठाया तो वह हँसोड़ बिरादरी में भी नहीं दाखिल हुए। उनका व्यक्तित्व ग्राम-शोभा के वर्णन से यहाँ तक विकृति की सृष्टि नहीं, उसकी खोज करता रहा है, इस मामले में वह अपने समकालीन परसाई से काफी भिन्न है। जोकि टूटने योग्य है, उसे तोड़ ही डालने के कायल हैं और शरद जोशी या रवीन्द्रनाथ त्यागी से तो बहुत ही भिन्न हैं जिन्होंने चुकी हुई चीजों पर हँसने-हँसाने दक्षता अर्जित की है।"[2]

प्रेमचंद और निराला की तरह श्रीलाल शुक्ल भी टूटे मूल्यों की स्थापना के लिए प्रेरित करते हैं। साहित्य और समाज की विसंगतियों को उन्होंने उजागर किया है। साहित्य के बारे में एक उदाहरण द्रष्टव्य है- "दरबार में हजारों कवि और लेखक-नौकर थे। वे दिन-रात साहित्य लिखते रहते और साहित्य फल भले ही न रहा हो, फूल बड़े जोर से रहा था फूलने की एक मिसाल यह है कि एक पड़ोसी बादशाह ने मुल्क पर हमला किया तो उस मौके पर लिखी जाने

वाली कविताओं से साहित्य इतना फूला, इतना फूला कि कहीं-कहीं भक्क से फूट गया। जहाँपनाह की हुकूमत का एक पूरा का पूरा महकमा साहित्य लिखने के लिए था। साहित्य एक तरह से हुकूमत बन गया था।"[3]

शुक्लजी का उपन्यास 'राग दरबारी' हिन्दी का श्रेष्ठ व्यंग्य उपन्यास माना गया है। उपन्यास में व्यंग्य के माध्यम से देश की वर्तमान स्थिति का वर्णन किया गया है। शिवपालगंज एक गाँव नहीं, पूरे भारत का प्रतीक है। इसमें पूरे देश के परिवेश में व्याप्त विसंगतियों का विश्लेषण है। स्वतंत्रता के बाद की कर्त्तव्यहीनता, गैरजिम्मेदारी, सत्ता हथियाने के लिए किये गये साम, दाम, दंड और भेद, सभी क्रिया-कलापों की पोल, सीधी-सीधी भाषा में खोल कर रख दी गयी है। चालाकी, मक्कारी और फरेब सब यहाँ शिवपालगंज में मौजूद है। "यहाँ नेता का काम सिर्फ रात-दिन भाषण देना है, विश्वविद्यालय अस्तबल के समकक्ष हैं, प्रोफेसर और प्रिंसीपल भाड़े के टट्टू हैं जो अपनी नौकरी बचाने के लिए कुछ भी करने को तैयार हैं।"4. उपन्यास का नायक रंगनाथ इतिहास में एम०ए० करके रिसर्च आरंभ करता है, उसी के शब्दों में 'घास खोद रहा हूँ।' "उसे शिवपालगंज के बारे में ज्ञात होता है कि, जो कहीं नहीं है, वह यहाँ है और जो यहाँ नहीं है, वह कहीं नहीं है।"5. देश की शिक्षा पद्धति पर व्यंग्य कसते हुए लेखक कहते हैं-"वर्तमान शिक्षा पद्धति रास्ते में पड़ी हुई कुतिया है जिसे कोई लात मार सकता है।"6. गाँव की राजनीति के कुशल खिलाड़ी वैद्य जी हैं, वे गाँव के सब कुछ हैं। वे गाँव की कई संस्थाओं के मैनेजर हैं। "कॉलेज की यह खुशकिस्मती थी कि वैद्य जी मैनेजर हैं, क्योंकि ऐसा मैनेजर पूरे मुल्क में न मिलेगा। सीधे के लिए बिल्कुल सीधे हैं और हरामी के लिए खानदानी हरामी।"7 भाई-भतीजावाद का आलम भी उपन्यास में देखने लायक हैं। बड़े-बड़े पदों पर आसीन सभी अपने-अपने आदमियों को ही काम पर लगाए हुए है। कॉलेज के अधिकतर शिक्षक वैद्य जी और प्रिंसीपल साहब के नाते-रिश्तेदार है,इनके अलावा अन्य किसी और के लिए कॉलेज में कोई रिक्तियां ही नहीं है।

'राग दरबारी' उपन्यास का एक पात्र गयादीन कहता है, "जो जहाँ है अपनी जगह गोह की तरह चिपका बैठा है। टस-से-मस नहीं होता। चाहे जितना कोंचो, चाहे जितना दुरदुराओं, वह अपनी जगह चिपका रहेगा और जितने नाते-रिश्तेदार हैं, सब उसकी दुम के सहारे सड़ासड़ चढ़ते हुए ऊपर तक चले जायेंगे।"8 यहाँ अच्छे और ऊंचे विचार आदमी के गधेपन को साबित करते है। विसंगति को चारों ओर से उजागर करता हुआ यह उपन्यास दृष्टिहीनता पर आक्रमण करता है।

शिवकुमार मिश्र ने श्रीलाल शुक्ल के इस उपन्यास के बारे में टिप्पणी करते हुए कहा हैं- "किन्तु श्रीलाल शुक्ल के यहाँ गाँवों के प्रति ऐसा कोई संवेदनात्मक लगाव नहीं दिखाई पडता । राग दरबारी आजादी के बाद गाँवों की सतह पर बजबजा रही विकृति का आख्यान है जो इतना विरूप और वीभत्स है कि असहनीय है। प्रगतिशील सोच वाले किसी यर्थाथनिष्ठ लेखक से एक प्रबुद्ध पाठक की यह अपेक्षा जायज़ है कि वह इस असहनीयता के खिलाफ आलोचनात्मक रूख अपनाते हुए, उसके जिम्मेदार व्यक्ति, संस्थाओं तथा सत्ता का पर्दाफाश करते हुए ऐसी ताकतों से भी उसका साक्षात्कार कराये जो उस विकृति में जीते हुए भी उसके खिलाफ संघर्षरत है।"[9]

यह कहना असंगत नहीं होगा कि विकृतियों से पूर्ण इस युग में भोग प्रति, राग-दरबारी में संवेदना दिखाई नहीं पड़ती। व्यंग्य की मार पीड़क और पीड़ित सभी व्यक्ति के ऊपर समान रूप से पड़ती है। व्यंग्य ऊपर से कितना ही अक्रामक क्यों न हो, उसके अंतर में करुणा और मानवीय संवेदना की भावना होती है। "श्रीलाल शुक्ल की यथार्थ की पकड़, उनकी पैनी दृष्टि, उनकी धारदार शैली, हम इन सबका आदर करते हैं, परन्तु उनसे यह अपेक्षा भी रखते हैं कि वे अपनी यथार्थ दृष्टि को उस मानवीय संवेदना से जोड़कर अपनी रचनाओं में अर्थवान बनायें जो अपने बाद की यथार्थवाद रचनाकार पीढ़ी को प्रेमचंद की सबसे बड़ी वसीयत रही है।"[10] फिर भी इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि अपनी शैली, शिल्प और कथ्य में 'राग-दरबारी' एक अनूठा उपन्यास है। देश में व्याप्त विसंगतियों पर दसों दिशाओं से सीधा प्रहार भी कम साहस का काम नहीं है। "राग दरबारी के पूर्व व्यंग्य उपन्यासों का व्यंग्य आवरण की अपेक्षा रखता था। हरिशंकर परसाई ने 'रानी नागफनी की कहानी' में फैंटेसी का सहारा लिया था और राधाकृष्ण को सपनों की सनसनाहट से गुजरना पड़ा। काल्पनिक प्रसंगों, चूहों और गधों के बहाने सामयिक परिदृश्य पर व्यंग्य करने का युग 'राग दरबारी' के साथ समाप्त हो गया।"[11]

'अंगद का पाँव' व 'यहाँ से वहाँ' श्रीलाल शुक्ल की अन्य व्यंग्य रचनाएँ हैं। अपनी पुस्तक 'यहाँ से वहाँ' में उन्होंने वर्तमान शिक्षा व्यवस्था पर तीखा व्यंग्य करते हुए लिखते है "विद्यार्थियों का एक गुट, एक ग्रेजुएट द्वारा प्रचारित कुंजियों की अंग्रेजी, कुशवाहाकान्त और प्यारेलाल 'आवारा' की हिन्दी और देशज व्यक्तित्व में काली चमड़ी की तरह चिपकी स्थानीय ग्रामीण बोली का भावात्मक समन्वय पेश कर रहा है। बुजुर्गों के चेहरों पर विद्यार्थियों की इस अभिजात्यहीनता के कारण नफरत की धूल-सी चढ़ रही है।"[12] समाज में व्याप्त विसंगतियों पर श्रीलाल शुक्ल ने अपने ढंग से प्रहार किया है। वे सधी हुई भाषा में सीधा प्रहार करते हैं। व्यंग्य की कचोट के

साथ-साथ करुणा और हास्य का पुट अपनी रचनाओं में विद्यमान करना ही श्रीलाल शुक्ल की विशेषता है। इन्होंने भी राजनीति और अर्थनीति के खोखलेपन पर सशक्त व्यंग्य किया है। उनके व्यंग्य-लेखन में तीखी मार के साथ-साथ रोचकता भी है।श्रीलाल शुक्ल ने ही व्यंग्य को कलात्मक शिल्प प्रदान किया है। उन्होंने अपने व्यंग्य-लेखन में साहित्यिक क्षेत्र में व्यास विसंगतियों को भी अधिक महत्त्व दिया है। श्रीलाल शुक्ल के पास सक्षम भाषा एवं तीखी चोट करने वाली प्रहारक शक्ति है।

श्रीलाल शुक्ल ने साहित्य की सभी विधाओं में साहित्य के मान्य विधागत साँचों को तोड़ा है।वे जनभावनाओं में बदलाव में परिवर्तन लाने के लिए पौराणिक विश्वासों पर भी आए अतः उन्होंने उसका एक तरह प्रस्तुतिकरण किया कि पाठक उनपर फिर सोचने को विवश हो जाए। व्यंग्यकार जन-साधारण को सचेत करने के लिए व्यंग्य लिखता है। वह लोंगों की संवेदनाओं को केन्द्र में रखता है।व्यंग्यकार आवश्यकता पड़ने पर स्वयं को भी नहीं छोड़ता। श्रीलाल शुक्ल ऐसे ही श्रेष्ठ व्यंग्यकार है जिन्होंने अपनी रचनाओं में तटस्थ होकर सामाजिक विसंगतियों एवं विद्रूपताओं उजागर किया है। दरअसल दुनिया में निरन्तर बदलाव के कारण एक बेचैनी, एक व्यापक असंतोष उनके साहित्य का मुख्य स्वर है।

श्रीलाल शुक्ल जितने बड़े लेखक हैं, उससे कहीं अधिक बड़े मनुष्य। बड़ा लेखक होने की आवश्यक योग्यता मेरी समझ से बड़ा मनुष्य होना ही है। जो व्यक्ति मानवीय नहीं होगा, वह सामाजिक कैसे होगा? और, सामाजिक नहीं होगा, तो साहित्य कैसे रचेगा? हिन्दी में वैसे उस तरह के लेखकों की कमी नहीं है, जिन्होंने लेखक के रूप में तो अपनी बड़ी इमारत खड़ी कर ली है, पर व्यक्ति के रूप में वे बहुत नीचे हैं। उनके लेखन से उनके व्यक्तित्व, आहार-व्यवहार, मान्यताएँ आदि कहीं मेल नहीं खातीं। श्रीलाल शुक्ल इस मामले में बिल्कुल भिन्न हैं। सम्भव है कि हिन्दी में उनके जैसे चन्द लेखक और हों, पर यहाँ हमें श्रीलाल जी की बात करनी है, जिन्होंने साहित्य-सृजन में प्रबन्धन-क्रम को कभी महत्त्व नहीं दिया।

श्रीलाल शुक्ल के स्थापना-काल और घनघोर लेखन का जो दौर था, वह हिन्दी साहित्य में कई मायनों में विचित्र था। सन् 1945 की अपनी कहानी बताते हुए वे अपनी एक व्यंग्यात्मक कविता की चर्चा करते हैं, जो उन्होंने बीस वर्ष की आयु में लिखी थी। वे खुद अपने सक्रिय लेखन का शुभारम्भ सन् 1954 से मान रहे हैं, अर्थात् स्वाधीनता प्राप्ति के सात वर्ष बाद। तब

तक देश आजाद हो गया, कुछ चालाक शिक्षित और कुछ प्रशिक्षित चालाक स्वाधीन भारत की व्यवस्था में अपने लिए कुर्सी, या थोड़ी-सी जगह पा लेने के उद्योग में लगे हुए थे; कम-से-कम कुर्सी के आस-पास भी बने रहने की जुगत बैठा रहे थे। साहित्य का आँगन इस वृत्ति से बचा नहीं रहा था। स्वाधीनतापूर्व के समय जिस साहित्य ने फिरंगी-वर्चस्व को धूल चटा दिया था, स्वातन्त्र्योत्तर काल में पाँव स्थिर करने वाले कई साहित्यजीवी-साहित्यभोगी उसी भाषा-साहित्य के आँगन में धन्धा और प्रबन्धन की विद्यापीठ स्थापित कर ली। चुनावी घोषणा पत्र की तरह साहित्य में भी घोषणाएँ होने लगीं। साहित्य को आत्म-स्थापन और आत्म-प्रचार का माध्यम बनाया जाने लगा था। बदकिस्मती से सक्रिय लेखन में श्रीलाल शुक्ल का आगमन उसी दौर में हुआ और उन तमाम विसंगतियों को झेलते हुए, उन्हें अपनी अलग छवि दृढ़ करने की मशक्कत करनी पड़ी। हिन्दी कहानी के मद्देनजर तो बीसवीं शताब्दी का छठा दशक कई तरह से चर्चा में है।

स्वातन्त्र्योत्तर काल के प्राथमिक दो दशक (सन् 1947-1967) भारतीय लोक-तन्त्र के लिए विकराल हलचल का समय है। श्रीलाल शुक्ल के उपन्यास--'सूनी घाटी का सूरज', 'अज्ञातवास', 'रागदरबारी' और 'अंगद का पाँव'(व्यंग्य संग्रह) इसी दौरान लिखे गए। इन दो दशकों के सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और साहित्यिक परिदृश्य का जैसा चेहरा श्रीलाल शुक्ल के समक्ष था, उसके सामने साहित्य में व्यंग्य से बड़ा हथियार कुछ नहीं हो सकता था। सत्ता के गलियारे में भटक रहे बुद्धिजीवियों; वणिक् धर्म अपनाकर आत्म विज्ञापन, और आत्मोन्नयन के प्रबन्धन में लिप्त हो गए साहित्यसेवियों को देखकर निश्चय ही श्रीलाल शुक्ल के समक्ष सन्नाटे की स्थिति खड़ी हो गई होगी। आजादी की खुशी, उन्माद और उल्लास के आनन्द में विभोर रहने के बावजूद सन् 1947 से 1967 तक के अन्तराल में देश का विभाजन, सीमा संघर्ष, प्राकृतिक आपदाओं, विप्लवों, दलबन्दियों, हत्याओं, बलात्कारों, दंगों, तानाशाही और शासकीय बेहयाई का जो ताण्डव मचा उससे मानवता शर्मसार हुई। मुक्तिकामी भारतीय जनता ने इन तमाम विसंगतियों के समक्ष खड़े होकर अनाज-पानी के देवताओं और भारत के नव निर्वाचित भाग्य विधाताओं को अपनी क्षमता का परिचय दिया। श्रीलाल शुक्ल के साहित्य लिखने की मजबूरी ये ही स्थितियाँ बन। और, इन परिस्थितियों के बीच साहित्य का धन्धा करना उनसे सम्भव नहीं हुआ। सम्भवतः यही कारण हो कि उन्होंने सघनता और सक्रियता से कहानी लिखकर नई कहानी अथवा समान्तर कहानी के विद्यालयों में शामिल होने की बजाए व्यंग्य का मार्ग अपनाया।

व्यंग्य श्रीलाल शुक्ल की अभिव्यक्ति का मूल धर्म है, यह उनके उपन्यासों में भी बखूबी दिखता है। उनके अभ्यासकाल की रचनाओं में भी व्यंग्य के तीखे स्वर ही दिखाई देते हैं। अपनी युवावस्था के आवेशपूर्ण क्षण में ही उन्होंने देश की जैसी दशा देखी थी, उसमें सम्भवतः अनुमान कर लिया था कि इस देश में आम नागरिक के जगने से अधिक आवश्यक है बुद्धिजीवियों का जगना। और, बुद्धिजीवियों को जगाने के लिए सहज रास्ता सही नहीं होगा, व्यंग्य से ही उन्हें सही तरीके से जगाया जा सकता है। ऐसे विराट व्यक्तित्व, उदारतम स्वभाव के महान लेखक के पूरे साहित्य पर पूरी किताब का लिख जाना भी कम पड़ेगा। यहाँ उनकी टिप्पणियों के एक संग्रह पर बात करते हैं। खबरों की जुगाली उनकी छियालीस व्यंग्यात्मक टिप्पणियों का ताजा-तरीन संकलन है। ये टिप्पणियाँ वर्ष 2003-2005 में 'इण्डिया टुडे' (हिन्दी) पत्रिका के पाक्षिक स्तम्भ में प्रकाशित हुई थीं। दस उपन्यास, चार कहानी संग्रह, एक साक्षात्कार संग्रह, नौ व्यंग्य संग्रह, एक आलोचना पुस्तक, दो विनिबन्ध, चार अनूदित पुस्तक, एक सम्पादित पुस्तक के रचनाकार श्रीलाल शुक्ल का जितना विराट लेखकीय व्यक्तित्व है। उनकी प्रसिद्ध कृति राग दरबारी को पाठकों के बीच रामचरित मानस और गोदान की तरह प्रशस्ति मिली। उस पुस्तक का मूल स्वर व्यंग्य ही है। उसे व्यंग्य-लेखन की दिग्दर्शिका कहें तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी।

श्रीलाल जी की पहली पुस्तक सूनीघाटी का सूरज उपन्यास सन् 1957 में प्रकाशित हुआ। सन् 1968 में रागदरबारी का प्रकाशन हुआ। तत्कालीन घटनाओं और परिस्थितियों पर चिन्तनशील लेखक का क्षणिक, मगर जागरूक टिप्पणी है। इसे प्रस्तुत करते हुए लेखक ने साफ-साफ कहा है कि यह एक तरह की जुगाली है, पर निरुद्देश्य नहीं है, इनमें दर्ज शंकाओं, सम्भावनाओं, प्रश्नों का जिक्र लेखक ने पाठकों की तरफ से किया है। पुस्तक के आच्छादप पृष्ठ पर सही लिखा गया है कि ये रचनाएँ भारतीय लोक-तन्त्र के धब्बों, जख्मों, अन्तर्विरोधों और गड्ढों का आख्यान प्रस्तुत करती हैं। हमारे विकास के मॉडल, चुनाव, नौकरशाही सांस्कृतिक क्षरण, विदेश नीति, आर्थिक नीति आदि अनेक जरूरी मुद्दों की व्यंग्य-विनोद से सम्पन्न भाषा में तल्ख और गम्भीर पड़ताल है। इस आलोक में उन्होंने मुफलिसी, अशिक्षा, बेरोजगारी और ऐसी ही अनेक दुर्गतियों से जूझते भारतीय समाज के सुख-दुख, राग-विराग के प्रति सजगता और संवेदना रखी है। अपने लेखन के हर मौके पर उन्हें पाठकों की रुचि और अनुभव की गहराइयों की चिन्ता रही है। जो साहित्य उदात्त संवेदनाओं को पनपने न दे, अनुभूति-जगत की ऊपरी सतह खुरचकर ही हरी-हरी फसल उगाने की कोशिश करे, उसे वे घटिया साहित्य मानते हैं, पाठक वर्ग और समाज के लिए अहितकर मानते हैं।

इस संकलन की टिप्पणियों में वे अपने पूर्वर्धारित छवि के पार बेशक नहीं गए, पर इसलिए यह कहना जायज नहीं होगा कि इनमें उनकी उक्त धारणाओं की पुष्टि नहीं होती। उन्होंने जो कुछ लिखा, सदैव की तरह अपनी मान्यताओं और स्वानुभूति से निर्धारित मानदण्डों के अनुकूल ही लिखा। इक्कीसवी सदी के शुभद नारों का तुमुल कोलाहल भी थोथे साबित हुए। विकास प्रक्रिया के नाटकीय मिजाज से सब कुछ चल रहा था। जिस दौर में ये रचनाएँ लिखी गईं और प्रकाशित होकर पाठकों के मन-मिजाज में समायोजित हुईं, वह दौर पूरी तरह से अराजकता की हद पार का दौर था। सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, बौद्धिक, व्यापारिक हर संकाय से नैतिक मूल्य का लोप चुका था। अपने वक्तव्यों के अनुसार श्रीलाल शुक्ल साहित्य से हमेशा कोई बड़ी उम्मीद नहीं रखते, कोई बहुत बड़ी अपेक्षा नहीं रखते। वाकई, यदि ऐसा होता, तो उनकी इन जुगालियों से देश में बहुत कुछ परिवर्तन हो जाता। व्यंग्य वाकई प्रबुद्ध मस्तिष्क वाले पाठकों की प्रतीक्षा करता है। बहुपठित और विज्ञ होने के साथ-साथ नागरिक संवेदना से ओत-प्रोत लेखक श्रीलाल शुक्ल ने हर जगह अपने जनसम्बन्ध और नागरिक चिन्ता का संकेत दिया है। छोटे-छोटे विषय की व्याख्या करते वक्त उन्होंने विराट लक्ष्य की ओर संकेत किया है।

संदर्भ सूची

1. हिन्दी व्यंग्य साहित्य और हरिशंकर परसाई/ डॉ.मदालसा व्यास
2. यहाँ से वहाँ/श्रीलाल शुक्ल/परिचय, रघुवीर सहाय के लेख से
3. यहाँ से वहां/ श्रीलाल शुक्ल/ पृष्ठ 35
4. राग दरबारी/श्रीलाल शुक्ल/पृष्ठ 9
5. राग दरबारी/श्रीलाल शुक्ल/पृष्ठ 9
6. राग दरबारी/श्रीलाल शुक्ल/पृष्ठ 13
7. राग दरबारी/श्रीलाल शुक्ल/पृष्ठ 35
8. राग दरबारी/ श्रीलाल शुक्ल/ पृष्ठ 116
9. प्रेमचंद: विरासत का सवाल/शिवकुमार मिश्र/पृष्ठ 138
10. प्रेमचंद: विरासत का सवाल/शिवकुमार मिश्र/140
11. हिन्दी का स्वतन्त्रयोत्तर हास्य और व्यंग्य/बालेन्दूशेखर तिवारी/157
12. यहाँ से वहाँ/श्रीलाल शुक्ल/पृष्ठ 78